Translation of Area of *W.W. Sawyer - The Universal Math Teacher* : **Vivek Monteiro_From Azim premji University At Right Angles_March, 2019**

डब्ल्यू. डब्ल्यू. सॉयर
गणित के सार्वभौमिक शिक्षक

विवेक मॉन्टेरो

मुख्य शब्द : *गणित शिक्षा, इतिहास, तर्क, सन्दर्भ*

शिक्षा का अधिकार (आरटीई) अधिनियम की धारा 8 के स्वाभाविक परिणाम के रूप में, आज प्राथमिक स्कूल में पढ़ने वाले हर भारतीय बच्चे को गणित की गुणवत्तापूर्ण शिक्षा हासिल करने का क़ानूनी अधिकार है। शायद भारत दुनिया में ऐसा अकेला देश है जहाँ यह क़ानूनी तौर पर अनिवार्य है। अब भारत में गणित की शिक्षा के एजेंडा में दो सवाल निश्चित रूप से शामिल हैं : "गणित की गुणवत्तापूर्ण शिक्षा क्या है?" और, "क्या हर बच्चे के लिए इसे सुनिश्चित करना सम्भव है?"

प्रो. डब्ल्यू. डब्ल्यू. सॉयर, जिनका 2008 में 97 साल की उम्र में निधन हुआ, सम्भवतः ऐसे पहले व्यक्ति थे जिन्होंने आरटीई अधिनियम के अर्थ में गणित के सर्वव्यापीकरण को स्पष्ट रूप से व्यक्त किया था और उपरोक्त दोनों सवालों के जवाब गहराई में जाकर तलाशने की कोशिश की थी।

1958 में, 'दी पॉसिबिलिटी ऑफ़ यूनिवर्सल मैथेमैटिकल लिटेरेसी' (टीपीयूएमएल) नामक लेख में उन्होंने लिखा था : *"हमारे सामने एक गहरा संकट है और एक शानदार मौक़ा। विज्ञान और प्रौद्योगिकी में हो रहे बदलाव अर्ध-कुशल श्रमिकों को बेकार बनाने की तरफ़ जा रहे हैं। उच्च शिक्षा प्राप्त लोगों, शिक्षकों, गणितज्ञों, तकनीशियनों की माँग तेज़ी-से बढ़ रही है। सामाजिक और राजनीतिक विस्थापन से तभी बचा जा सकता है जब हम उससे कहीं ज़्यादा संख्या में लोगों को उच्च स्तर तक शिक्षित कर सकेंगे, जितना कि अभी तक सम्भव माना जाता रहा है। गणितीय ढंग से सोचने की क्षमता को उतना ही सहज समझना होगा जितना कि वर्तमान में अख़बार पढ़ने की क्षमता को माना जाता है। ऐसा बदलाव कई लोगों को ख़्याली पुलाव लगेगा। उसी तरह जैसे कुछ सदियों पहले तक सार्वभौमिक साक्षरता का ख़्याल हास्यास्पद लगता होगा।*

बीसवीं सदी की शिक्षा को लेकर दो सम्भावित नज़रिए :

अ. यह मानवीय रूप से सम्भव सर्वश्रेष्ठ स्थिति की द्योतक है।

ब. यह एक नए समाज की तलाश में हाथ-पाँव मारने जैसा है। सबके लिए शिक्षा की अवधारणा बमुश्किल एक सदी पुरानी है। इसकी कार्यकुशलता की तुलना 1750 की औद्योगिक कार्यकुशलता के स्तर से की जा सकती है।

इतिहास के नए दौर में दाख़िल होना हमेशा ही मुश्किल होता है...

आज की आबादी स्पष्ट रूप से दो भागों में बँटी हुई है। एक तरफ़ हैं वे लोग, जो गणित से नफ़रत करते हैं, उससे भय खाते हैं और दूसरी तरफ़ हैं चन्द गणितज्ञ।

उल्लेखनीय बात यह है कि इस तरह के परिणाम को सामान्य मानकर स्वीकार कर लिया जाता है। यह वैसा ही है मानो शारीरिक शिक्षा उसे लेने वाले 90% बच्चों को पंगु बना देती हो।"

यह दृढ़ विश्वास, कि गणित का सर्वव्यापीकरण उसी तरह से सम्भव है जिस तरह हर नागरिक अपनी मातृभाषा के साथ सहज हो जाता है, गणित की शिक्षा सम्बन्धी सॉयर के उस काम की बुनियाद है जो तक़रीबन आठ दशकों तक, प्राथमिक से लेकर विश्वविद्यालय के सभी स्तरों तक और कई महाद्वीपों में फैला रहा। गणित में सफलता की उनकी परिभाषा, उनके समस्त लेखन की तरह ही सरल लेकिन बहुत गहरी है : *पूर्ण सफलता का अर्थ होगा कि हर व्यक्ति को यह महसूस हो कि, "जितना समय सीखने को मिला, मुझे गणित में ख़ूब मज़ा आया। अगर कभी मुझे थोड़ा और गणित सीखने की ज़रूरत पड़ी या इच्छा हुई तो मुझे ऐसा करने में डर नहीं लगेगा।"*

गणित को सामान्य तौर पर एक मुश्किल और गूढ़ विषय माना जाता है जो कुछ चुनिन्दा और विशिष्ट लोगों के लिए ही सुलभ होता है। सॉयर के जीवन भर का काम इसकी उलटी बात को साबित करने के लिए समर्पित रहा कि आप और मेरे जैसे साधारण लोगों को भी गणित को समझना, सीखना और उसका आनन्द लेना सिखाया जा सकता है।

नीचे हम उनकी कुछ अन्तर्दृष्टियों पर ग़ौर करेंगे जो आज भी उतनी ही प्रासंगिक और उपयुक्त हैं जितनी कई दशकों पहले लिखे जाने के वक्त थीं।

सॉयर कहते हैं कि *गणित के शिक्षण में गहनता* को *गणित में गहनता* की समस्या के साथ नहीं मिलाया जाना चाहिए। हमेशा सौम्य रहने वाले सॉयर ने गणित के शिक्षण में गहनता के लगभग सर्वव्यापी अभाव की जमकर आलोचना की है। 1946 में सॉयर भारत आए थे, और उन्होंने इंडियन मैथेमेटिकल सोसाइटी के समक्ष "गणित का शिक्षण" विषय पर एक व्याख्यान दिया था।

सम्भवतः किसी और विषय में शिक्षक और विद्यार्थी के बीच ग़लतफ़हमी की इतनी गुंजाइश नहीं होती जितनी गणित में। शिक्षक ब्लैकबोर्ड के पास खड़ा होता है। उसे बिल्कुल स्पष्ट है कि ब्लैकबोर्ड पर लिखे संकेतों का अर्थ क्या है और उनसे क्या निष्कर्ष निकाला जा सकता

है। लेकिन कई विद्यार्थियों के लिए स्थिति इसके बिल्कुल उलट होती है। वे संकेत क्या दर्शा रहे हैं, शिक्षक को कैसे पता कि क्या सही है और क्या ग़लत और वैसे भी इस पूरी कवायद का उद्देश्य क्या है– यह सब रहस्य के पर्दे में होता है। विद्यार्थियों की बहुत बड़ी संख्या ऐसी है जो ख़ुद से यही कहती है,

"हम इस विषय को कभी नहीं समझ सकते, लेकिन हमें परीक्षा तो पास करनी है। हमें इसे रटना ही होगा।"

यह तो कोई सन्तोषजनक स्थिति नहीं है। यह रटने का तरीक़ा न सिर्फ़ विद्यार्थियों पर एक ग़ैर-ज़रूरी बोझ लाद देता है, बल्कि यह बहुत अनुपयोगी भी है। इससे न तो विषय की समझ बनती है और न ही आम ज़िन्दगी में गणित का उपयोग करने की क्षमता हासिल होती है।

हम चीज़ों को जितना विद्यार्थी के नज़रिए से देखेंगे, उतने बेहतर शिक्षक बन पाएँगे। और विद्यार्थी के मन में पहला सवाल आता है, "आख़िर हमें यह सब करना ही क्यों पड़ता है?" जब मैं स्कूल में था तो लड़के हमेशा यही पूछा करते थे और उन्हें कभी भी सन्तोषजनक जवाब नहीं मिलता था। शिक्षक तरह-तरह के जवाब गढ़ते थे लेकिन उनमें से कोई भी जवाब आश्वस्त करने वाला नहीं होता था। मेरे ख़्याल में सच्चाई यह है कि गणित इसीलिए पढ़ाया जाता है क्योंकि इसे पढ़ाने का ***रिवाज़*** *है।*

इसी बात को अपने एक लेख 'फ़्रॉम एब्सट्रेक्ट टू कॉन्क्रीट' (अमूर्त से ठोस की ओर, 1962) में उन्होंने और तीखे ढंग से कहा है : *बुरे ढंग से पढ़ाए गए अंकगणित की निराशाजनक बात यह होती है कि वह बच्चे की बुद्धिमत्ता और कुछ हद तक उसकी सत्यनिष्ठा को भी नष्ट कर देता है। अंकगणित पढ़ाए जाने से पहले बच्चे एकदम बेतुकी बातों पर अपनी सहमति नहीं देंगे। लेकिन बाद में, वे ऐसा करने लगते हैं। चीज़ों को देखने और उनके बारे में सोचने की बजाय वे किसी शिक्षक या परीक्षक को ख़ुश करने की उम्मीद में बिल्कुल निराधार अन्दाज़े लगाने लगाते हैं।*

अपनी किताब *अ कॉन्क्रीट अप्रोच टू एब्सट्रेक्ट अलजेब्रा* (1959) में वे बताते हैं कि किस तरह नहीं पढ़ाया जाना चाहिए : *"ऐसे कोर्स की योजना बनाते वक्त किसी भी प्राध्यापक के लिए चुनाव करना ज़रूरी है। हो सकता है उसका लक्ष्य एक परिपूर्ण गणितीय कलाकृति रचने का हो, जिसमें हर स्वयंसिद्ध कथन को व्यक्त किया जाएगा, बिल्कुल दोषरहित तर्क के साथ हर निष्कर्ष निकाला जाएगा और पूरे पाठ्यक्रम का समावेश कर लिया जाएगा। सुनने में यह बहुत अच्छा लगता है लेकिन हक़ीक़त में नतीजा अक्सर यह होता है कि विद्यार्थियों को तनिक भी समझ नहीं आता कि आख़िर चल क्या रहा है। कुछ स्वयंसिद्ध कथनों का उल्लेख किया जाता है। इनका चयन कैसे किया जाता है? हम अन्य स्वयंसिद्ध कथनों की बजाय इन पर ध्यान क्यों दें? यह विषय किस बारे में है? इसका उद्देश्य क्या है? अगर इन सवालों को अनुत्तरित रहने दिया जाता है तो विद्यार्थी हताश हो जाते हैं। भले ही वे हर एक निगमन*

को समझ जाएँ लेकिन फिर भी वे विषय के बारे में प्रभावी ढंग से नहीं सोच पाते। उसका ख़ाका नदारद होता है। विद्यार्थियों को पता नहीं होता कि इस विषय की उपयुक्तता कहाँ है, और यह बात उनके दिमाग को पंगु बना देती है।"

पर इसका एक विकल्प है :

"दूसरी तरफ़, प्राध्यापक शुरुआत के लिए कुछ परिचित विषयवस्तु चुन सकते हैं। विद्यार्थी ख़ुद सामग्री इकट्ठी करें, सवालों पर काम करें, नियमितताओं का निरीक्षण करें, परिकल्पनाएँ गढ़ें, प्रमेयों की खोज करें और उन्हें सिद्ध करें। हो सकता है कि काम बहुत तेज़ी-से न हो, हर विषयवस्तु को शामिल न किया जा सके, अन्तिम रूपरेखा खुरदुरी हो। लेकिन विद्यार्थी को पता होता है कि वह क्या कर रहा है और किधर जा रहा है। वह विषय पर अपने अधिकार के प्रति निश्चिन्त है, उसका अपने ऊपर भरोसा मज़बूत होता है।"

और गणित का अच्छा शिक्षण क्या होता है?

गणित के शुरुआती शिक्षण की सबसे ज़रूरी बात होती है कि विद्यार्थी को प्रमाणों को तौलने की, ख़ुद से निर्णय करने की आदत डाल लेना चाहिए। (विज़न इन ऐलिमेंट्री मैथमैटिक्स 1964)

ज़रूरी बात होती है विषय में दिलचस्पी जगाना :

मुझे इस बात का पक्का यक़ीन है कि दिलचस्पी न रखने वाले बच्चों को कोई विषयवस्तु पढ़ाने की कोशिश न सिर्फ़ शिक्षक पर तनाव डालती है, बल्कि विद्यार्थियों को भी इससे कोई लाभ नहीं पहुँचता।

किसी चीज़ में दिलचस्पी होना एक एहसास, एक भावना होती है। हमारी भावनाएँ हमारे हुक्म की गुलाम नहीं होतीं। यह कहने का कोई मतलब नहीं कि, "मैं तुम्हें एक कहानी सुनाऊँगा और तुम्हें किसी भी हालत में उससे आनन्दित होने की कोशिश करना है।" हँसने या प्रेम में पड़ने की भाँति दिलचस्पी भी ऐसी चीज़ है जो बस हो जाती है। शिक्षा तब घटित होती है जब वयस्क लोग ऐसा तरीक़ा खोज पाएँ जो किसी बच्चे के भीतर की ऊर्जा को बन्धन से मुक्त कर सके और उसे उपयोगी या कम-से-कम अहानिकारक रास्तों की तरफ़ मोड़ सके। स्वीकार्य रास्तों की तरफ़ बच्चों की ऊर्जा का मुड़ना शिक्षण का एक बेहद अहम पहलू है। यह बच्चों पर एक सभ्यताजनक प्रभाव छोड़ता है और इस तरह के प्रभावों की उतनी ज़रूरत कभी नहीं थी जितनी कि आज है।

(मैथेमैटिक्स, इमोशन्स, थिंग्ज से)

शिक्षा मूलत: मानसिक ऊर्जा की दिशा होती है। बच्चों के पास प्रचुर मात्रा में ऊर्जा होती है निकास की तलाश में...

विकास के विभिन्न चरणों में किसी व्यक्ति की ऊर्जाएँ कई तरह की चीज़ों पर लगी होती हैं जो रूमानी रंगत ले लेती हैं– जैसे साइकिल की सवारी, बास्केटबॉल की टीम में जगह मिलना, प्रेम होना और प्रणय निवेदन करना...

ख़ूबसूरती देखने वाले की आँखों में होती है। कोई भी विषय, कोई भी गतिविधि प्रेम का आभामण्डल हासिल कर सकती है।

अगर प्रेम के ज़रिए मन की एकाग्रता स्थापित न हुई हो तो सोच-विचार बेहद असन्तोषजनक और अप्रभावी हो जाता है।

(टीपीयूएमएल)

इसलिए, गणित के अच्छे शिक्षण का सत्त्व है 'प्रेरणा' और मनोबल : *किसी विश्वविद्यालय के व्याख्यान में आप इस बारे में निश्चिन्त हो सकते हैं कि सभी वाजिब परिणाम बताए जाएँगे और प्रमाणित किए जाएँगे। लेकिन विद्यार्थियों को अक्सर उस स्थिति में नहीं लाया जाता कि वे यह देख सकें कि यह पूरा सिलसिला दरअसल क्या करने की कोशिश कर रहा है, इसकी शुरुआत कहाँ से हुई और यह कहाँ जा रहा है। मुझे याद है जब मैं कैम्ब्रिज में था तो मुझे सिर्फ़ दो ऐसे व्याख्याताओं के बारे में पता चला जो विषय के इतिहास पर चर्चा करते थे।*

मैं विश्लेषण की चर्चा करके इस बात को समझाना चाहूँगा। एक सर्वेक्षण में यह पाया गया था कि स्कूल में विद्यार्थियों को गणित का जो हिस्सा सबसे मज़ेदार लगा था वह था कलन, जबकि विश्वविद्यालय में विद्यार्थियों को गणित का जो हिस्सा सबसे कम पसन्द रहा वह था विश्लेषण। स्कूल के दौर में कलन सहज ज्ञान से ही हो जाता है, अगर आपको कुछ सुनने में वाजिब और दिखने में सही लगता है तो आप उसे स्वीकार कर लेते हैं। विश्वविद्यालयों में ठीक इससे उलटा होता है। हर एक चीज़ को अत्यन्त विधिसम्मत सटीकता के साथ प्रमाणित करना पड़ता है।

स्कूल उस तरीक़े के अनुरूप चलते हैं जिस तरीक़े से सत्रहवीं और अठाहरवीं सदी के गणितज्ञ काम करते थे। विश्वविद्यालय उस तरीक़े के अनुरूप चलते हैं जिस तरीक़े से उन्नीसवीं सदी के गणितज्ञ सोचते थे।

इसकी एक बेहद दिलचस्प व्याख्या है कि आख़िर क्यों इतिहास के एक ख़ास चरण में गणित पहले तरीक़े से दूसरे तरीक़े पर चला गया। दरअसल यह संगीत और गणित के मिलाप का परिणाम था। (टॉक दैट वॉज़ नॉट गिवन से)

इसके बाद सॉयर फोरियर विश्लेषण की उत्पत्ति को बयान करते हैं, और यह बताते हैं कि क्यों और कैसे इसकी वजह से फलनों के अभिसरण की अलग-अलग संकल्पनाओं की ज़रूरत पड़ जाती है। वे जो भी लिखते हैं वह सीधी-सादी भाषा, आनन्द देने वाले गद्य में होता है जिसके पीछे गणित की ठोस और गहरी समझ रहती है।

1911 में जन्मे डब्ल्यू. डब्ल्यू. सॉयर ने कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय से स्नातक स्तर की पढ़ाई पूरी की जिसमें उन्होंने क्वांटम यांत्रिकी और सापेक्षता के व्यावहारिक गणित में विशेषज्ञता प्राप्त की। इसके तत्काल बाद उन्होंने गणित को सीखने और सिखाने को समर्पित अपने लम्बे पेशेवर जीवन की शुरुआत की। पहले उन्होंने कई साल ब्रिटेन में पढ़ाया। उनकी पहली किताब *मैथेमैटीशियन्स डिलाइट* (1943) (एमडी) "गणित के भय को दूर करने" के लक्ष्य से लिखी गई थी।

सॉयर की दूसरी किताब, *मैथेमैटिक्स इन थ्योरी एंड प्रेक्टिस* (1948), जो उन्होंने सम्पादित की थी और जिसके दस में से छह अध्याय उन्होंने लिखे थे, स्कूली गणित की संकल्पनाओं से बच्चों का परिचय कराने के लिए विभिन्न साज़-सामानों से चीज़ें बनाने के तरीक़े के महत्त्व के बारे में बात करती है।

उनकी तीसरी किताब, *प्रिल्यूड टू मैथेमैटिक्स* (1955), जिसकी कल्पना उन्होंने तब की जब वे यूनिवर्सिटी कॉलेज (गोल्ड कोस्ट, अब घाना) में गणित के विभागाध्यक्ष थे (1948 - 50), 'गणितज्ञों को कैसे बढ़ाया जाए' विषय पर केन्द्रित है।

अगर मैं अपनी बात करूँ तो सॉयर की *प्रिल्यूड* से मेरा परिचय एक वरिष्ठ मित्र और कॉलेज में उस्ताद रहे नितान्त (अब प्रो. वी. एम. केन्क्रे, ऐमेरिटस प्राध्यापक, भौतिकशास्त्र, यूएनएम, यूएसए) ने कॉलेज के पहले साल में करवाया था। इस किताब ने मुझ पर गहरा असर छोड़ा। इसे पढ़ने के बाद मैं बहुत आनन्दित और प्रफुल्लित हुआ, हालाँकि उस समय मुझे किताब की हर बात तो समझ नहीं आई थी। (इस किताब के बारे में लिखने वाले कई अन्य लेखकों ने भी इसे पढ़ने के बाद आनन्द और उल्लास की इसी भावना को अनुभव करने का वर्णन किया है।) *प्रिल्यूड* को पढ़ने के बाद प्रिंसटन के प्राध्यापकों ने सॉयर को पाठ्यचर्या पर काम करने के लिए अमरीका बुलाया। उस समय सॉयर कैंटरबरी कॉलेज, न्यूज़ीलैंड में थे (1951-56)।

सॉयर के लेखन में प्रारम्भिक गणित से लेकर 'उन्नत' गणित तक एक बड़ा दायरा शामिल है। *विज़न इन ऐलिमेंट्री मैथेमैटिक्स* में वे दिखाते हैं कि किस प्रकार "एक संख्या के बारे में सोचो" जैसे सरल-से खेल द्वारा बीजगणित से बच्चों का परिचय करवाया जा सकता है, कि किस प्रकार अज्ञात संख्याओं को चीज़ों द्वारा भी निरूपित किया जा सकता है और उन्हें कंकड़ों की भाँति जोड़ा या घटाया जा सकता है। मैंने भी प्राथमिक स्कूल के सैकड़ों शिक्षकों को बीजगणित से परिचित करवाने के लिए इस पद्धति का उपयोग किया है। और हर जगह

से मुझे यही प्रतिक्रिया मिली कि, “मुझे एहसास ही नहीं था कि बीजगणित इतना सरल होता है।”

मैथेमैटीशियन्स डिलाइट स्कूल की ज्यामिति पर लिखी गई है जिसमें लेखक ने कलन से भी परिचय करवाया है। माध्यमिक स्तर के गणित को उनकी तीन अन्य किताबें, *डिज़ाइनिंग एंड मेकिंग* (1957, स्ऑली के साथ लिखी गई), *वॅाट इस कैलकुलस अबाउट* (1961) और *द सर्च फ़ॉर पैटर्न* (1970) भी काफ़ी विस्तार से बयान करती हैं।

कॉलेज और विश्वविद्यालय स्तर के गणित को चार अन्य किताबों– *अ कॉन्क्रीट अप्रोच टू एब्सट्रेक्ट अलजेब्रा* (1959), *अ पाथ टू मॉडर्न मैथेमैटिक्स (एपीएमएम)* (1966), *एन इंजीनियरिंग अप्रोच टू लीनियर अलजेब्रा* (1972) और *अ न्यूमैरिकल अप्रोच टू फंक्शनल एनालिसिस* (1978) –में शामिल किया गया है।

सॉयर की हरेक किताब एक सदाबहार क्लासिक है। गणित के किसी भी विषय के विस्तार और प्रक्रियाओं में जाने से पहले वे पाठक को इस बात का भान ज़रूर कराते हैं कि ‘उस विषय की उत्पत्ति क्या है और वह कहाँ जा रहा है।’ सॉयर ने जो कुछ भी लिखा, यह एक वाक्य उसका सही वर्णन कर देता है– वे अपने पाठक तक सरलतम ढंग से यह बात पहुँचाने के लिए समर्पित थे कि ‘आख़िर यह सब है क्या’।

हो सकता है हमारे विषय के बड़े पण्डित उनकी शैली पर नाराज़गी जताएँ– उदाहरण के लिए, एफाइन स्पेस (*द ऐरिथमैटिक ऑफ़ स्पेस*, एपीएमएम) पर लिखे अपने अध्याय में वे कुत्ते और बिल्लियों को जोड़ने व घटाने से सदिश के जोड़ का परिचय कराते हैं। बाद में वे भिन्नात्मक और ऋणात्मक कुत्ते और बिल्लियों की भी बात करते हैं –लेकिन साधारण पाठक तो ख़ुशी से बस यही कहेगा “अरे वाह! मुझे तो पता ही नहीं था कि यह इतना सरल होता है।”

उनके लेखन के कुछ और नमूने ऊपर कही गई बात को स्पष्ट कर देंगे।

ज्यामिति सीखने का सबसे अच्छा तरीक़ा है उस राह पर चलना जिस पर मानव जाति शुरुआत में चली। चीज़ें करो, बनाओ, उन पर ध्यान दो, उनको व्यवस्थित करो और तब जाकर उनके बारे में तर्क-वितर्क करो।

(मैथेमैटीशियन्स डिलाइट, एमडी)

माध्यमिक स्तर की कक्षाओं के लिए सॉयर कलन से सम्बन्धित प्रारम्भिक पद्धतियों पर ही ज़ोर देते थे, जो 12 से 15 साल तक के बच्चों के साथ किए गए उनके काम पर आधारित थीं। वे *एमडी* में इस चर्चा को इस तरह शुरू करते हैं– *बुनियादी समस्या : अवकलन गणित की बुनियादी समस्या यह है : हमें यह पता लगाने के लिए एक नियम दे दिया जाता है कि*

कोई वस्तु किसी ख़ास समय पर कहाँ होगी और यह पता लगाने को कहा जाता है कि वह कितनी तेज़ी से गति कर रही है।

सम्मिश्र फलन सिद्धान्त पर हुई एक अद्भुत चर्चा का निचोड़ वे इन शब्दों में पेश करते हैं– *एक ऐसा व्यापक प्रमेय है जिसे मैंने कभी किसी पाठ्यपुस्तक में इस तरह से व्यक्त किया हुआ नहीं पाया है :*

किसी भी ऐसे वृत्त के भीतर जो मूल बिन्दु पर केन्द्रित हो और किसी भी विलक्षणता के बग़ैर हो, आप गणित के किसी भी समझदार विद्यार्थी को सूझने वाली घात श्रेणी पर आराम से कोई भी संक्रिया कर सकते हैं।

('द इम्पॉर्टैन्स ऑफ़ द अनबिलीवेबल')

मैं और नवनिर्मिती की टीम प्रो. सॉयर के जीवन के आख़िरी पाँच सालों में उनकी बेटी और दामाद के माध्यम से उनके सम्पर्क में थे। हमने तब ख़ुद को बेहद सम्मानित महसूस किया जब सॉयर के गुज़र जाने के बाद हमें उनकी किताबों, अनुवादों और हाथ से लिखी टिप्पणियों का एक संग्रह प्राप्त हुआ जिसे अब पुणे स्थित सॉयर स्मारक में सहेजा गया है। सॉयर के जिन लेखों का यहाँ ज़िक्र हुआ है वे दो वेबसाइटों, मार्क ऐल्डर द्वारा स्थापित www.macro-learningsystems.com और नवनिर्मिती द्वारा स्थापित www.wwsawyer.org पर उपलब्ध हैं। वीईएम को मराठी में अनूदित किया गया है। सॉयर के लिखे का अनुवाद करना आसान नहीं है। लेकिन, अगर हम, जितनी जल्दी हो सके, उनकी कृतियों का भारतीय भाषाओं में सामूहिक रूप से अनुवाद कर सकें तो भारत में गणित की शिक्षा को इसका अत्यधिक लाभ मिलेगा।

विवेक मॉन्टेरो ने 1974 में स्टेट यूनिवर्सिटी ऑफ़ न्यू यॉर्क, स्टोनी ब्रूक से सैद्धान्तिक भौतिकी में अपनी डॉक्टरेट की पढ़ाई पूरी की। फिर वे भारत वापस आए और दो साल टीआईएफआर में काम करने के बाद 1977 में अपने काम का क्षेत्र बदलते हुए पूरी तरह से ट्रेड यूनियन का काम करने लगे। वे वर्तमान में सीटू की महाराष्ट्र प्रदेश समिति के सचिव हैं। नवनिर्मिती नामक एक आत्मनिर्भर संगठन, जिसके वे संस्थापक-सलाहकार हैं, के माध्यम से उन्होंने गणित और विज्ञान की शिक्षा के क्षेत्र में सक्रिय रूप से काम करना जारी रखा है। वे सॉयर मेमोरियल ट्रस्ट के ट्रस्टी भी हैं।

अनुवाद : भरत त्रिपाठी **पुनरीक्षण** : सुशील जोशी **कॉपी एडिटर** : अभिषेक दुबे (सभी एकलव्य फ़ाउण्डेशन) **सम्पादन** : राजेश उत्साही